इकाई- 5 *वार्ता-लेखन*

पाठ-संरचना

5.0. उद्देश्य

5.1. परिचय

5.2.1. वार्त्ता-लेखन एवं उसके अभिलक्षण

5.2.2. वार्त्ता-लेखन की प्रविधि एवं विशेषताएँ

5.3. वार्त्ता-लेखन के प्रदर्श (दूरदर्शन एवं आकाशवाणी)

5.4. समाचार पत्र के लिए वार्त्ता लेखन-विशेषताएँ

5.5. वार्त्ता-लेखन के प्रदर्श

5.6. सारांश

5.7 अभ्यास के प्रश्न

5.8 पठनीय ग्रन्थ

५.० उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य छात्रों में व्यावसायिक दृष्टि से स्वावलम्बन की भावना का विकास करना है। सूचना-प्रसारण के युग में वार्त्ता-लेखन का महत्त्व अत्यन्त बढ़ गया है। आकाशवाणी, दूरदर्शन, समाचार पत्र एवं अन्य मुद्रित माध्यमों एवं यान्त्रिक सूचना तन्त्रों के लिए वार्त्ता-लेखन की निपुणता व्यावसायिक दृष्टि से आवश्यक है। जीवन, समाज, राष्ट्र के प्रत्येक क्षेत्र में सूचना तन्त्र का महत्त्व बढ़ गया है, अतः वार्त्ता लेखन की क्षमता-प्राप्ति एक प्रकार से अनिवार्य हो गई है।

५.१ परिचय

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, उसे केवल जीवन की निम्नतम आवश्यकताओं से सन्तोष नहीं होता, अपितु विचारों एवं अपनी भावनाओं से अपने समाज के नहीं, वरन् दूसरे समाज के सदस्यों को भी सुपरिचित कराना चाहता है तथा अधिकांशतः अपने विचारों के अनुरूप समाज के निर्माण में योग देना चाहता है। सांस्कृतिक, राजनीतिक क्षेत्रों के नायकगण इसी विचार धारा से प्रेरित रहते हैं।

वार्त्तालेखन एक नई विधा है, जिसका उपयोग अनेक प्रकार से किया जाता है। दूरदर्शन, आकाशवाणी, समाचार-पत्र तथा यान्त्रिक माध्यम आज के राष्ट्रिय एवं अन्ताराष्ट्रिय जगत के विभिन्न क्षेत्रों में बहुविध उपलब्धि के साधन बन चुके हैं।

विभिन्न संचार माध्यमों में भिन्नता होते हुए भी वार्ता-लेखन की कुछ सामान्य विशेषताएँ उन सभी में पाई जाती हैं। परन्तु उनमें कुछ विविधता भी पाई जाती है। दूरदर्शन एवं आकाशवाणी के लिए जो वार्ताएँ प्रस्तुत की जाती है और समाचार पत्रों में संवाददाताओं द्वारा लिखी जाती हैं, उनमें अन्तर होना स्वाभाविक है।

इस इकाई में संचार माध्यमों आकाशवाणी, दूरदर्शन एवं समाचारपत्रों का विवेचन किया गया है। यह ध्यान देने की बात है कि समाचार पत्र केवल पाठ्य होते हैं। आकाशवाणी की वार्त्ताएँ श्रव्य होती हैं तथा दूरदर्शन की वार्त्ताएँ दृश्य एवं श्रव्य दोनों होती है। अतः स्वाभाविक है कि इन संचार माध्यमों के संवाददाताओं, लेखकों द्वारा प्रस्तुत वार्त्ताओं की शैली में भिन्नता परिलक्षित होती है।

५.२. वार्त्ता लेखन एवं उसके अभिलक्षण

जिज्ञासा मानव की सहज वृत्ति है। एक ओर वह बाह्य सृष्टि के विषय में जानने को उत्सुक रहता है तो दूसरी ओर मानव के अन्तर्जगत् के विषय में भी सब कुछ जान लेना चाहता है, उसके अनुभवों का लाभ उठाने की आकांक्षा मन में रहती है। इसके साथ ही हर व्यक्ति में अपने 'अर्न्तजगत्' को उद्घाटित कर देने की सहज प्रवृत्ति विद्यमान है। बाह्य जगत को देखकर उसमें विचर विचरण कर, मन पर पड़े प्रभाव का वह प्रकटीकरण कर देना चाहता है। संचित विभिन्न अनुभवों, ज्ञान तथा स्फुरणा को अभिव्यक्त कर देने में वह संतोष ओर आनन्द की अनभूति करता है। दूसरों के साथ वैचारिक आदान-प्रदान से उसे तृप्ति मिलती है। जिज्ञासा और अभिव्यक्ति एक दूसरे के पूरक हैं। मानव ने परस्पर रंजन, दूसरों को जानने और स्वयं को अभिव्यक्त करने के लिए अनेक क्रिया-कलापों तथा दूसरे साधनों का अवलम्बन लिया है। काव्य और कलाओं की सृष्टि का भी मूल यही है।

काव्य को दृश्य काव्य और श्रव्य काव्य, गद्य काव्य और पद्यकाव्य इन वर्गों में विभक्त किया जाता है। दृश्य काव्य में नाटक वर्ग की रचनाओं को स्थान दिया गया है तथा पाठ्य श्रव्य काव्य में शेष विधाओं की रचनाओं को। कविता पद्य-साहित्य ओर अन्य विधाएँ सामान्यतः गद्य साहित्य के अन्तर्गत आती है। काव्य में गद्य का अत्यधिक महत्त्व है। कविता की कसौटी गद्य को माना गया है-'गद्यं कवीणां निकषं वदन्ति।' नाटक, निबन्ध, आलोचना, कहानी, उपन्यास आदि गद्य की बहुप्रचलित विधाएँ हैं। किन्तु पिछले कतिपय दशकों से जो अन्य विधाएँ विकसित हुई हैं, उनमें रिपोटिज, संस्मरण, रेखाचित्र पत्र आदि के साथ साथ 'वार्ता' का नाम उल्लेखनीय है।

'वार्ता' एक नूतन विधा है, जो विचारों की सशक्त अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में उत्तरोत्तर प्रगति के पथ पर आरूढ़ है। इसमें जिज्ञासु व्यक्ति किसी विशिष्ट साहित्यिक, नेता, समाजसेवी, कलाकार अथवा अन्य व्यक्ति से स्वयं भेंट करके प्रश्न वार्ता आदि करता है। उसके व्यक्तित्व, जीवन, कृतित्व, विचारों, परिवेश आदि के विषय में सीधे जानकारी प्राप्त करता है।

वार्ता जनसंचार का अनिवार्य अंग है। पत्रकारों ने ही नहीं बल्कि लेखकों तथा

दूरदर्शन–आकाशवाणी के प्रतिनिधियों ने भी इसे नि:संकोच अपनाया है। किन्तु इसके बीज भारत में वैदिक काल में ही उपलब्ध है। प्राचीन काल में वेद–उपनिषदों में संवाद, शंका समाधान, प्रश्नोत्तर की परम्परा पाई जाती है, किन्तु वर्तमान रूप में यह विधा पाश्चात्त्य पत्रकारिता से प्रभावित है।

वार्ता शब्द संस्कृत के √ वृत्त् धातु से निष्पन्न है। संस्कृत में √ वृत्त् धातु का अर्थ वर्णन करना है। √ वृत्त् धातु से 'घञ्' प्रत्यय लगाकर √ वृत्त् + घञ् = वार्त पुनः वार्त+ टाप् (स्त्री प्रत्यय) से वार्ता पद की निष्पत्ति होती है। ''कोई भी बातचीत तभी वार्ता कहलाती है जबकि वह जनसाधारण के ज्ञानार्थ किसी पत्र–पत्रिका में प्रकाशित या आकाशवाणी–दूरदर्शन पर प्रसारित की जाती है अथवा इसी उद्देश्य से वार्तालाप किया जाता है। निजी वार्तालाप अथवा शङ्का–समाधान साक्षात्कार विधा के अन्तर्गत नहीं आते । इसी प्रकार किसी शोधकार्य के सन्दर्भ में की गई बातचीत यदि उनका उद्देश्य प्रकाशन–प्रसारण नहीं हैं, इस विधा को अन्तर्गत नहीं आती है।

रेडियो अथवा दूरदर्शन वार्त्ता साहित्य के एक नए रूप में उभरी है। प्राचीन संस्कृत के साहित्य दर्पण अथवा रसगंगाधर में अथवा किसी साहित्य शास्त्र, किसी भी प्राचीन ग्रन्थ में 'वार्त्ता' विधा की चर्चा नहीं मिलती है। रेडियो वार्त्ता अथवा दूरदर्शन वार्त्ता साहित्य का एक बिल्कुल नवीन रूप है जिसका प्रारम्भ रेडियो के आविष्कार के पश्चात् हुआ है। रेडियो अथवा आकाशवाणी तथा उससे प्रसारित होने वाली रचनाएँ 'श्रव्य' होती हैं और उनकी सफलता अपने श्रव्य रूप में ही बोधगम्य होने में है। अत: प्रसारित रचना का प्रारूप निबन्ध ात्मक नहीं रहना चाहिए। क्योंकि निबन्ध श्रव्य रूप में बोधगम्य नहीं हो सकता।

वार्ता श्रव्य रचना हैं, पाठ्य नहीं । निबन्ध पाठ्य कृति है। यदि निबन्ध प्रसारित करना आवश्यक हो तो उसे वार्ता में परिवर्तित करना आवश्यक है अन्यथा वह नीरस एवं अनाकर्षक हो जाएगा और वार्ता ऊबाऊ हो जाने के कारण निश्चित रूप से असफल हो जाएगी। अत: रेडियो– माध्यम की अपेक्षाओं का उसकी सीमाओं और सम्भावनाओं का ज्ञान वार्त्ता लेखक को अवश्य रहना चाहिए। दृश्य माध्यम के लिए लिखित रचनाओं को रेडियों के श्रव्य रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास रेडियो वार्त्ता की असफलता का प्रथम कारण है। मुद्रित निबन्ध एवं वार्त्ता के अन्तर को समझने के लिए रेडियो वार्त्ता को साहित्य के नवीन रूप में स्वीकार करना चाहिए तथा निबन्ध से वार्ता सर्वथा भिन्न है यह मानकर या तो निबन्ध को वार्त्ता में रूपान्तरित करना चाहिए अथवा वार्त्ता के नियमानुसार दूसरी वार्ता लिखनी चाहिए। निबन्ध का वार्त्ता के रूप में प्रसारण अनुचित है। इसे निम्न उदाहरण द्वारा देखा जा सकता है।

वार्त्तानिबन्धयोरन्तरम् :

निबन्ध : (1) शरीररचनायां यत्स्थानं स्नायु–शिरा–धमनीनां तदेव राष्ट्रजीवने सञ्चारपरिवहनयो: अस्ति । आर्थिक–सैन्य–प्रशासकीयदृष्ट्या सञ्चारं परिवहनं च राष्ट्रोत्थानाय परमावश्यकं कारकमस्ति। अनयो: बृहत्तरं उद्देश्यं मनसि निधाय एव ब्रिटिशशासकेन एकोनविंशशताब्द्यां भारतवर्षे सञ्चारपरिवहनयो: कार्यं प्रारब्धम्। तदा प्रभृति एतेषां साधनानां क्रमेण विकास: सञ्जात:। सम्प्रति विकासकार्य्यं प्रचलत्येव।

स्वतन्त्रताप्राप्त्यनन्तरं सञ्चार-परिवहनसाधनानां विकासः उल्लेखनीयः जातः। प्रथमपञ्चवर्षीयायां योजनायां कृषिसेचनशक्तिसाधनैः सह सञ्चारपरिवहनयोः स्थानं विकासस्य त्रिषु सर्वप्रमुखेषु क्षेत्रेषु अभवत्। अस्यां योजनायाम् अनयोः विकासाय अनुमानतः 43146 कोटिपरिमितो धनव्ययः अभवत् ।

देशे सञ्चारपरिवहनयोः प्रचाराय सर्वकारेण उदारनीतिः प्रदर्शिता। प्रथमयोजनावधौ डाकतार- विभागाय प्रायेण 39,5 कोटिपरिमितानां रुप्यकाणां व्ययः कृतः। मीलद्वयान्तरे स्थिते प्रत्येके ग्रामे डाकगृहस्य स्थापना उद्देश्यम् आसीत् एतद्योजनानुसारं डाकगृहाणां संख्या पञ्चपञ्चाशत्सहस्राधिका अभवत्।

निबन्ध का यह अंश वार्त्ता के रूप में परिवतर्तित होने पर कुछ इस प्रकार का होगा—अपि भवता कदापि विचारितम् यत् अस्माकं शरीरं केन प्रकारेण सम्यक् स्वकार्यं करोति ? एषः अस्माकं शिराधमनीस्नायूनाम् एव प्रभावः अस्ति। रक्तप्रवाहः शरीरस्य एकस्मात् स्थानात् अपरं स्थानं यावत् प्रसरति। एकस्य स्थानस्य चेतना इतरं स्थानं याति। एतत्प्रेरणया एव वयं जीवामः कार्याणि च प्रकुर्मः। कस्यापि राष्ट्रस्य सम्यक् सञ्चालनाय अपि अनिवार्यता भवति यत् अस्माकं समाचाराः योजनानां शतानि प्रसारिता भवेयुः। पञ्जाबप्रान्तस्य गोध ूमचणकादीनि खाद्यान्नानि ममान्तिकम् आगच्छेयुः। शासनसञ्चालनाय देशस्य राजधान्याः दिल्लीतः आदेशाः प्रान्तेषु सारल्येन सम्प्राप्ताः भवेयुः। पाटलिपुत्रस्य सूचनाः गया-दरभङ्गादिषु नगरेषु प्राप्ताः स्युः। सेनायामपि एवमेव सूचना-समाचारादीनाम् आदानं प्रदानं च भवेत्। एतदर्थं साधनानाम् आवश्यकता अपरिहार्या। एषु साधनेषु सञ्चारपरिवहनादीनि एव प्रमुखानि सन्ति। एतानि एव राष्ट्रजीवनस्य शिराधमनीस्नायवश्च सन्ति। राष्ट्रियं जीवनं स्वास्थ्यं च तादृशमेव अस्ति। स्वाधीनताप्राप्त्यनन्तरम् अस्माकं सर्वकारेण एतत् सर्वं सम्यक् परिज्ञातम्। अधुना तद्विकासाय च दिवानिशम् प्रयासः अपि क्रियते।

विविध प्रकार के संचार माध्यमों के कारण वार्त्ता लेखन में विविधता पाई जाती है। प्रमुख जनसंचार माध्यम दूरदर्शन, रेडियो (आकाशवाणी) एवं मुद्रित माध्यम (प्रिंट) है।। इनमें रेडियो या आकाशवाणी माध्यम से जो वार्ता प्रसारित होती है, वह श्रव्य होती है। दूरदर्शन से जो वार्ता प्रसारित होती है वह दृश्य-श्रव्य होती है तथा प्रिंट या मुद्रित माध्यम से जो वार्त्ता प्रसारित होती है वह पाठ्य होती है। इस विभेदीकरण के कारण इन तीनों के वार्त्ता-लेखन की संरचना में अन्तर स्वाभाविक है। इन तीनों को प्रथमतः दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम के अन्तर्गत आकाशवाणी एवं दूरदर्शन आते हैं तथा दूसरे के अन्तर्गत समाचार पत्र या मुद्रित माध्यम।

इन संचार माध्यमों के द्विधा विभाजित करने का आधार यह है कि समाचार पत्र के लिए वार्ता लेखन केवल पाठ्य होता है। जबकि आकाशवाणी और दूरदर्शन श्रव्य होते हैं दूरदर्शन श्रव्य के साथ-साथ दृश्य भी होता है। जहाँ तक दर्शक या पाठक समूह की बात है, इन तीनों संचार माध्यमों के प्रति प्रतिक्रिया एक समान नहीं भी हो सकती है। किसी को दूरदर्शन देखना सुनना अधिक प्रिय हो सकता है तो दूसरे की आकाशवाणी वार्त्ताएँ सुनने में अधिक आनन्द मिल सकता है। जहाँ तक समाचार-पत्र अर्थात् मुद्रित माध्यम की बात है, उसकी वार्त्ता ही पढ़कर किसी को इन दोनों से अधिक संतोष प्राप्त हो सकता है।

इन सभी माध्यमों की अलग-अलग विशेषताएँ हैं जिनकी चर्चा आगे के अनुच्छेदों में की जाएगी। इनकी सामान्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

५.२.२. वार्त्ता-लेखन की प्रविधि एवं विशेषताएँ

वार्त्ता-लेखन की कुछ विशेषताएँ उल्लेखनीय है।

(1) आकर्षक आरम्भ, मध्य एवं अन्त–वार्त्ता लेखन में सर्वप्रमुख महत्त्वपूर्ण बिन्दु वार्त्ता का 'प्रारम्भ' है। वार्त्ता का आरम्भ बहुत ही आकर्षक, प्रभावशाली एवं रोचक होना चाहिए और सफल वार्त्ताकारों को अपनी प्रारम्भ की दो चार पंक्तियों में दर्शकों, पाठकों या श्रोताओं का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर लेना चाहिए। रोचकता एवं आकर्षकता के लिए पहली बात है कि वार्ता का प्रारम्भ भूमिकात्मक नहीं होना चाहिए। भूमिकात्मक प्रारम्भ की अनुपयुक्तता का द्वितीय कारण काल, स्थान की दृष्टि से वार्त्ता की सीमित अवधि है। रोचकता के लिए किसी रोचक संस्मरण से वार्त्ता का प्रारम्भ कर श्रोता में रुचि उत्पन्न की जा सकती है। वार्त्ता के प्रारम्भ का उद्देश्य यही होता है कि उससे दर्शकों, पाठकों एवं श्रोताओं के मन में अगले अंशों के प्रति रुचि एवं जिज्ञासा रहे।

किसी उद्धरण से भी वार्त्ता का प्रारम्भ आकर्षक बनाया जा सकता है। किसी व्यंग्य या वीररस आदि की प्रधान पंक्तियाँ उद्धृत कर प्रारम्भ में चमत्कार उत्पन्न किया जा सकता है, एतदर्थ किसी गोष्ठी के उद्घाटन का प्रारम्भ इस प्रकार किया जा सकता है।

श्लोक के अतिरिक्त किसी महापुरुष या विद्वान् के उद्धरण से भी वार्त्ता प्रारम्भ की जा सकती है। किसी महापुरुष की उक्ति से वार्त्ता का सौन्दर्य बढ़ता है, उसमें शक्ति आती है, और उसका आकर्षण भी बढ़ता है।

वार्त्ता को रोचक कहानियों से भी प्रारम्भ किया जा सकता है। उस सन्दर्भ में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि कहानी प्रासङ्गिक हो और वार्त्ता के मूल विषय से उसका घनिष्ठ सम्बन्ध हो।

व्यक्तिगत चर्चा से भी वार्त्ता का प्रारम्भ रोचक एवं आकर्षक बन सकता है। वार्त्ता वैयक्तिकता की कला है अतः वार्त्ताकार की अभिव्यक्ति से इसकी विशेषता बढ़ती है।

इस प्रकार वार्त्ता का प्रारम्भ अनेकानेक प्रकार से किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त भी अन्य प्रकार है। वार्त्ता का प्रारम्भ किसी प्रश्न से हो सकता है, किसी चमत्कारपूर्ण उक्ति से हो सकता है या श्रोताओं को चौकाने वाली किसी बात से हो सकता है। अतः आरम्भ के प्रकारों की कोई सीमा नहीं और इन्हें किसी निश्चित नियमों से नहीं बांधा जा सकता। यह वार्त्ताकार की प्रतिभा एवं कल्पना शक्ति पर निर्भर करता है कि वह किस प्रकार वार्त्ता प्रारम्भ करे। उसका एकमात्र उद्देश्य रोचकता, आकर्षणता एवं सरसता के आधार पर श्रोता, दर्शक या पाठक को बाँधे रखना है। कुछ वार्त्ताएँ सीमित अवधि की ओर संकेत करते हुए प्रारम्भ होती हैं। सीमित अवधि का संकेत प्रारम्भ से मध्य या अंत में कहीं भी प्रशंसनीय नहीं माना जाता। क्योंकि समयावधि का ज्ञान वक्ता एवं श्रोता दोनों को रहता है अतः इसका उल्लेख प्रभावशाली छाप नहीं छोड़ता।

वार्त्ता का प्रारम्भ ही नहीं अपितु मध्य भाग की महत्त्वपूर्ण है। मध्य भाग के लिए भी कोई विशेष नियम नहीं है। यह वार्त्ताकार को सबसे पहले ध्यान रखना चाहिए कि पूरी वार्त्ता में 'एकरसता' का दोष न हो। एकरसता रोचकता में सबसे अधिक बाधा डालते हैं। सम्पूर्ण वार्त्ता में केवल चौंकानेवाली बातें, नाटकीयता या बिल्कुल एक ढंग से कही जायँ, तो वार्त्ता में एकरसता अनायास ही आ जायेगी। इस एकरसता को भंग करने के लिए प्रयास आवश्यक है। इसके लिए वार्त्ता क्रम मे रोचक प्रसंगों, दृष्टान्तों एवं उद्धरणों को समाहित करना चाहिए। एकरसता को तोड़ने के लिए विषयान्तर भी आवश्यक है। किन्तु विषयान्तर करते समय वार्त्ताकार को विषयान्तर का कारण बता देना चाहिए और पुनः मुख्य विषय पर लौटते समय पहले छोड़ी हुई मुख्य बात का दूसरों शब्दों में उल्लेख करते हुए आगे की श्रृंखला बनानी चाहिए, अन्विति नहीं भंग नहीं होनी चाहिए। वार्त्ताकार को अपने विषय में विविधता लाने का प्रयास करना चाहिए और यह मनःस्थिति, दृष्टिकोण में परिवर्तन तथा स्पष्टीकरण में परिवर्तन द्वारा सम्भव है। इसके लिए वार्त्ताकार को अपने विषय को विभिन्न दृष्टि से देखना चाहिए। उसके विभिन्न पक्षों को उद्घाटित करना तथा विषयान्तर भी आवश्यक है।

अतः वार्त्ता की विषय वस्तु का विकास तर्क संगत रूप में, कार्य-कारण सम्बन्ध के आधार पर होना चाहिए। वार्त्ता की सभी कड़ियों को सुसम्बद्ध होना चाहिए। इस पद्धति में श्रोताओं की जिज्ञासा बनी रहती है। वार्त्ता के प्रारम्भ, मध्य के समान उसका अन्त भी महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। वार्त्ता की अंतिम पंक्ति से वार्त्ता की समाप्ति का ज्ञान होना चाहिए। श्रोता, पाठक या दर्शक को ऐसा आभास नहीं होना चाहिए कि वार्त्ता अभी और भी चल सकती है।

जिन वार्त्ताओं का उद्देश्य पाठकों, दर्शकों या श्रोताओं का सक्रिय सहयोग प्राप्त करना होता है, उनके अन्त में उस क्रियाशीलता का संकेत अपेक्षित है।

तथ्य-प्रधान वार्त्ताओं के अन्त में मुख्य बातों को दोहरा देना चाहिए ताकि श्रोता, पाठक अथवा दर्शक की स्मृति सुदृढ़ हो सके।

अन्य प्रकार की वार्त्ताओं के अंतिम अंश को किसी सुप्रसिद्ध सूक्ति, किसी कविता की पंक्ति, किसी महापुरुष के उद्धरण, किसी प्रश्न आदि से समाप्त कर चमत्कार उत्पन्न किया जा सकता है।

वार्त्ताओं की बोधगम्यता में टेक्निकल शब्दों के प्रयोग भी बाधक होते हैं। वार्त्ता सामान्यतः अपने-अपने विषय के विशेषज्ञ ही देते है और अपने विषय को प्रस्तुत करते समय उनमें अपने विषय के शास्त्रीय शब्दों के व्यवहार की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है। वैज्ञानिक, अर्थशास्त्री डाक्टर, कला विशेषज्ञ-सभी अपने विषयों पर बोलते समय प्रायः शास्त्रीय शब्दों का व्यवहार करते हैं, जो सामान्य श्रोताओं को बोधगम्य नहीं होते । वार्त्ताकार को प्रस्तुति के पूर्व यह निश्चित कर लेना चाहिए कि वह केवल अपने क्षेत्र के दूसरे विशेषज्ञों से ही बात कर रहा है या समाज के अन्य सामान्य व्यक्तियों से। यदि वह सामान्य व्यक्तियों तक विचार पहुँचाना चाहता है तो अपने विषय के टेक्निकल शब्दों के व्यवहार से बचना चाहिए और यदि ऐसे शब्दों का प्रयोग आवश्यक हो, तो उसकी व्याख्या करनी चाहिए ।

वार्त्ता की बोधगम्यता में एक बाधक तत्त्व दर्शकों, पाठकों एव श्रोताओं में अधिक ज्ञान

का अनुमान कर लेना है। सभी श्रोताओं का मानसिक स्तर एक समान नहीं होता है। उनकी शिक्षा, संस्कार, ज्ञान सभी विभिन्न स्तरों पर होते हैं। वार्त्ताकार को इन विभिन्नताओं पर ध्यान रखते हुए अपनी वार्त्ता को उस स्तर पर रखना है जहाँ वह अधिकाधिक श्रोताओं के लिए बोधगम्य हो सके। इसके अभाव में वार्त्ता निश्चित रूप से असफल हो जाएगी।

वार्त्ताओं की बोधगम्यता न केवल अभिव्यक्ति की सरलता और स्पष्टता पर अपितु विषय की रोचकता पर भी निर्भर है। विषय की रोचकता के विषय में ध्यातव्य है कि रुचि व्यक्ति-व्यक्ति के अनुसार बदलती रहती है, किन्तु रुचियों का एक सामान्य धरातल भी होता है। कुछ ऐसे स्तर भी हैं जहाँ व्यक्ति-व्यक्ति की रुचि का अन्तर मिट जाता है। इन स्तरों पर बात करके वार्त्ताकार अपनी वार्त्ता अधिकांश श्रोताओं के लिए रोचक बना सकता है।

मनोवैज्ञानिक मानव-मन के अध्ययन से इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि मनुष्य की सबसे अधिक रुचि स्वयं अपने में होती हैं। वार्त्ताकार इस अध्ययन के आधार पर वार्त्ता के विषय का सम्बन्ध श्रोताओं के जीवन से जोड़कर वार्त्ता को रोचक बना सकता है। दूरदर्शन में दृश्यत्व के कारण यह तत्त्व बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं है किन्तु रेडियो-वार्त्ता को श्रोताओं का ध्यान अपनी विषय-वस्तु और अभिव्यक्ति के द्वारा आकृष्ट करना पड़ता है। अतः रोचकता अनिवार्य है।

रोचकता के विषय में दूसरी ध्यान देने की बात यह है कि मनुष्य विचारों और भावों से अधिक दूसरे लोगों के जीवन में अभिरुचि रखता है। अतः वार्त्ताकार को वार्त्ताओं के विषय मानवीय तत्त्वों से सम्बन्धित रखने चाहिए। यात्रा-विवरणों, अपने अनुभवों आदि से सम्बन्धित वार्त्ताओं में इस मनोवैज्ञानिक सत्य का उपयोग करना चाहिए।

वार्त्ताकार को श्रोताओं की मानसिक शक्ति का भी ध्यान रखना चाहिए। एक ही बार बहुत सी बातों को सुनकर उनका स्मरण रखना सामान्य श्रोता के लिए सम्भव नहीं है। मनुष्य की मानसिक शक्ति सीमित होती है, वह एक साथ अनेक तथ्यों को ग्रहण नहीं कर सकता। अतः आवश्यक है कि छोटी सी अवधि की वार्त्ता में बहुत सी बातें नहीं कहीं जायँ। वार्त्ताएँ प्रायः पांच, दस या बीस मिनट तक की होती है। पांच या दस मिनट की वार्त्ताओं में अनेकानेक तथ्यों को रखना उचित नहीं, किन्तु प्रायः वार्त्ताकार अधिक से अधिक सामग्री श्रोताओं को देना चाहते हैं। यह उचित नहीं है। वार्त्ताकार को तथ्य स्पष्ट एवं प्रभावोत्पादक ढंग से प्रस्तुत करना चाहिए। साथ ही वार्त्ता में आयी प्रमुख बातों को कुछ-कुछ अन्तर पर व्यक्त करना चाहिए। हर तथ्य के साथ उनकी पर्याप्त व्याख्या भी होनी चाहिए। अनेक तथ्यों को एक अनुच्छेद में प्रस्तुत करने से श्रोता को समझने में कठिनाई होगी और उन्हें स्मरण रखना असम्भव हो जाएगा। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि वार्त्ता में कोई स्थल या तथ्य नहीं आना चाहिए जिसको समझने के लिए आगे-पीछे के संकेतों को फिर से देखने की आवश्यकता हो। क्योंकि मुद्रित सामग्री के पाठक के सदृश रेडियो-श्रोता के समक्ष सामग्री नहीं रहती। रेडियो-श्रोता की इस सीमा का ध्यान रखना आवश्यक है।

वार्त्ताकार को ध्यान में रखना चाहिये कि दर्शक अथवा श्रोता की स्मरणशक्ति की सीमा होती है। स्मरण शक्ति में बड़े-बड़े आँकड़े भी बाधक होते हैं, ये बहुत ही एकरस और अनाकर्षक होते हैं। अतः यदि वार्त्ताकार श्रोता को आँकड़े सुनाता है तो उन्हें प्रतिव्यक्ति, प्रति

घण्टा, प्रतिदिन आदि की छोटी इकाइयों में परिवर्तित कर देना चाहिए । इससे उनका महत्त्व भी ज्ञात होगा ओर वे आँकड़े भी याद रहेंगे।

वार्त्ता का रूप-संगठन स्मरण-शक्ति से भी सम्बन्ध रखता है। श्रोता वार्त्ता को सुनता भी जाता है और भूलता भी जाता है। किसी वार्त्ता की समाप्ति पर सामान्य जनता-श्रोता उसके प्रारम्भ और विकास के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कह पाता है। अतः श्रोता की इस सीमा को देखते हुए यह सोचना पड़ता है कि वार्त्ताकार को कैसी वार्त्ता प्रसारित करनी चाहिए। वार्त्ता में विचारों का शृंखलाबद्ध होना आवश्यक है। तर्क-सम्मत कारण-कार्य सम्बन्धों पर आधारित वार्ता स्मृति के लिए उपयुक्त होती है। इसके विपरीत मनोवैज्ञानिक कहानियाँ जिनमें सबकुछ भाव ही भाव है, केवल चेतना प्रवाह है, जिसमें एक वस्तु का दूसरी वस्तु से कोई सम्बन्ध नहीं रहता, स्मृति के लिए सर्वथा अनुपयुक्त होती हैं। अतः वार्त्ता में सुनिश्चित क्रम आवश्यक है।

अन्त में यह कहा जा सकता है कि कोई वार्त्ता अपने अपेक्षित पाठकों, श्रोताओं, दर्शकों के पास पहुँच सके, इसके लिए आवश्यक है कि वह सरल और स्पष्ट हो, उसमें बातों को घुमा-फिरा कर न कहकर सीधे प्रत्यक्ष ढंग से कहा जाय, टेकनिकल या शास्त्रीय शब्द बिल्कुल न हों, यदि हों भी तो उनकी पर्याप्त व्याख्या दी जाय, आँकड़ों से बचा जाय और उनके बिना काम न चले, तो उन्हें छोटी इकाइयों में आकर्षक रूप में उपस्थित किया जाय, तथ्यों की भरमार न की जाय और रोचकता एवं सुसम्बद्धता पर विशेष ध्यान दिया जाय। श्रोता की स्मृति को सहायता देने का एक उपाय यह भी है कि तथ्यप्रधान वार्ताओं के अन्त में वार्ता की मुख्य बातों का सारांश दे दिया जाय।

वार्त्ता में व्यक्ति विशेष बोलता है, अतः प्रसारण में व्यक्तित्व का भी महत्त्व है। रेडियो माध्यम की सबसे बड़ी विशेषता आत्मीयता है। आत्मीयता से तात्पर्य मैत्री और स्नेह सम्बन्ध से है। मित्रों के परस्पर वार्त्तालाप के क्रम में जिस प्रकार आत्मीयता का अनुभव होता है उसी प्रकार सफल प्रसारण भी इस प्रकार का अनुभव करा सकता है। प्रत्येक प्रसारण एक आत्मीय अनुभव है, जिसमें प्रसारणकर्त्ता और एकाकी श्रोता सहभोक्ता होते हैं।

वार्त्ता के लेखन की एक विशेषता-चित्रात्मकता भी है। चित्रात्मकता के लिए कल्पना शक्ति अपेक्षित है। कुशल वार्त्ता लेखक या वार्त्ताकार के सम्मुख यह समस्या उत्पन्न होती है कि वह किस प्रकार कल्पना शक्ति से काम ले तथा किस प्रकार अपने श्रोताओं, दर्शकों या पाठकों को सन्तुष्ट कर सके। शब्दों की शक्ति विशेषतः व्यञ्जना की विशेषता अपरिमित मानी जा सकती है। चित्रात्मकता के उदाहरण के लिए कालिदास के कुछ उद्धरण द्रष्टव्य हैं। मालविकाग्निमित्र की मालविका के रूप चित्रण में मानों वह सजीव हो गई है।

दीर्घाक्षं शरदिन्दुकान्ति वदनं बाहू नतावंसयोः
सङ्क्षिप्तं निबिडोन्नतस्तनमुरः पार्श्वे प्रमृष्टे इव।
मध्यः पाणिमितो नितम्बि जघनं पादावरालाङ्गुली
छन्दो नर्तयितुर्यथैव मनसि श्लिष्टं तथास्या वपुः ।।

कुमारसम्भव की पार्वती के इस शब्दचित्र में रंगों को स्पष्ट देखा जा सकता है।

पुष्पं प्रवालोपहितं यदि स्यान्मुक्ताफलं वा स्फुटविद्रुमस्थम्।

ततो ऽकुर्याद् विशदस्य तस्यास्ताम्रोष्ठपर्यस्तरुचः स्मितस्य।।

महर्षि कण्व के आश्रम–वर्णन में आश्रम का भव्य चित्र–

नीवाराः शुकगर्भकोटरमुख– भ्रष्टास्तरूणामधः
प्रस्निग्धाः क्वचिदिङ्गुदीफलमिदः सूच्यन्त एवोपलाः
विश्वासोपगमादभिन्नगतयः शब्दं सहन्ते मृगा–
स्तोयाधारपथाश्च वल्कलशिखानिष्यन्दरेखाङ्किताः।

गति के शब्द चित्र के लिए अभिज्ञानशाकुन्तल में वर्णित दुष्यन्त के दौड़ते हुए रथ का चित्र दर्शनीय है।

यदालोके सूक्ष्मं व्रजति सहसा तद्विपुलतां
यदर्धे विच्छिन्नं भवति कृतसन्धानमिव तत्
प्रकृत्या यद्वक्रं तदपि समरेखं नयनयो–
र्न मे दूरे किञ्चित्क्षणमपि न पार्श्वे रथजवात् (1–9)

रघुवंश के त्रयोदश सर्ग में भी गंगा यमुना के संगम का वर्णन चित्रकाव्य का उदाहरण है।

क्वचित्प्रभालेपिभिरिन्द्रनीलैर्मुक्तामयी यष्टिरिवानुविद्धा
अन्यत्र माला सितपङ्कजानामिन्दीवरैरुत्खचितान्तरेव ।। 13–54
क्वचित्खगानां प्रियमानसानां कादम्बसंसर्गवतीव पङ्क्तिः
अन्यत्र कालागुरुदत्तपत्रा भक्तिर्भुवश्चन्दनकल्पितेव ।। 13–53

इन विशेषताओं के अतिरिक्त निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान रखना आवश्यक है।

1. शीर्षक सटीक हो। उनमें अनावश्यक विस्तार न हो, उसके अर्थवत्ता होनी चाहिए।
2. द्वि–अर्थी शब्दों का चयन नहीं करना चाहिए।
3. कानूनी दृष्टि से समस्या खड़ी करनी वाली अथवा व्यक्ति विशेष की अवमानना करने वाली कोई बात प्रस्तुत नहीं करनी चाहिए।
4. विराम, अर्धविराम आदि का समुचित प्रयोग करना चाहिए।
5. नामों का संक्षेपीकरण नहीं होना चाहिए यथा–यू.एस. ए. के बदले 'अमेरिका' लिखा जाना चाहिए।
6. वार्तालेखन में दर्शक, पाठक या श्रोतृ वर्गों के बौद्धिक स्तर का ध्यान रखना अपेक्षित है। सामान्य जन के लिए वार्तालेखन एवं विशिष्ट वर्ग के लिए वार्तालेखन में अन्तर होना चाहिए।
7. वार्तालेखन के विषय निम्नप्रकार के हो सकते हैं।
   (क) मुद्रित माध्यमों के लिए वार्त्तालेखन का तात्पर्य संवाददाताओं द्वारा समाचार भेजे जाने से है।
   (ख) आकाशवाणी के लिए वार्त्ता लेखन का दो रूप हो सकता है प्रथमतः समाचार का वाचन तथा दूसरा किसी विषय पर एक या एक से अधिक वक्ताओं द्वारा विचार विमर्श। किसी विषय पर विचार विमर्श हेतु विचारक

विषयवस्तु प्रस्तुत करे तथा अन्य वक्ता विमर्श में भाग ले। वस्तुतः इस प्रकार के विमर्श सामयिक विषयों से लेकर राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक सभी विषयों पर हो सकते हैं।

(ग) जहाँ तक प्रश्न दूरदर्शन का है, वार्त्तालेखन का अर्थ वार्त्ता प्रसारण है। दृश्यात्मक होने के कारण वार्त्ता-वाचन की प्रभावोत्पादकता बढ़ाई जा सकती है। उसके लिए ध्वनि संयोजन और दृश्य संयोजन का उपयोग किया जा सकता है। ध्वनि संयोजन का उपयोग आकाशवाणी में भी किया जा सकता है।

दूरदर्शन, रेडियो या समाचार वार्त्ता में भाषा-शैली भी बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि भाषा न केवल एक कला है अपितु सामूहिक प्रेषणीयता का माध्यम है। इसका उद्देश्य मनोरञ्जन के साथ-साथ अधिकाधिक लोगों तक पहुँचना भी है। आकाशवाणी का प्रतीक चिह्न 'बहुजनहिताय बहुजनसुखाय' भी इसी अर्थ की व्यञ्जना करता है। अत: वार्त्ता लेखन में भाषा शैली पर गम्भीरपूर्वक विचार करना चाहिए। वार्त्ताकार को वार्त्ता का आलेख लिखते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि वह किस वर्ग के लिए वार्त्ता लिख रहा है और उसके अनुकूल भाषा का प्रयोग करना चाहिए। भाषा के लिए सबसे आवश्यक है, कि वार्त्ता की भाषा उन लोगों की भाषा हो जिनके लिए वार्त्ता प्रसारित की जा रही है। इसका अनेक स्तरों पर ध्यान रखना चाहिए । वार्त्ता की भाषा मिश्रित नहीं होनी चाहिए अर्थात् यदि हिन्दी भाषियों के लिए प्रसारित की जा रही है, तो प्रसारित भाषा हिन्दी में ही रहनी चाहिये उसमें संस्कृत, उर्दू, अंग्रेजी यदि भाषाओं के शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। वार्त्ता के प्रसङ्ग में इन भाषाओं के शब्दों, वाक्यों एवं उद्धरणों के प्रयोग से हिन्दी जाननेवाले श्रोताओं को बोधगम्यता में कठिनता आएगी। यदि उद्धरण आवश्यक हो तो उसका अनुवाद देना चाहिए। वार्त्ता प्रसारण क्रम में लोकभाषा के शब्दों के व्यवहार के प्रति सावधानी रखनी चाहिए। लोकभाषा के शब्द-व्यवहार से भाषा की व्यापकता सीमित हो जाती है। यह बोधगम्यता में बाधक है, क्योंकि जिस लोकभाषा का शब्द व्यवहृत किया गया है वह शब्द विशेष उसी लोकभाषा-भाषी के लिए बोधगम्य रहेगा।

आंचलिक शब्दों के व्यवहार से भाषा जनजीवन के अधिक निकट पहुँचती है; किन्तु आंचलिकता की एक सीमा है तथा दूरदर्शन या रेडियो वार्त्ता के कार्यक्षेत्र की अपेक्षा उसकी व्यापकता कम है। इसके विपरीत रेडियो अथवा दूरदर्शन का कार्यक्षेत्र बहुत ही विस्तृत एवं व्यापक होता है, उसकी सफलता अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचने पर निर्भर है। अत: बोलियों का प्रयोग यथासम्भव कम करना चाहिए ।

वार्त्ता की भाषा श्रोतृवर्ग के अनुरूप होनी चाहिए। अर्थात् वार्ता की भाषा उन लोगों की भाषा होनी चाहिए जिनके लिए वह प्रसारित की जा रही है। वार्त्ताएँ विभिन्न वर्गों के लिए प्रसारित की जाती है। सभी वर्गों की अपनी-अपनी भाषा होती है एवं उनकी दिलचस्पी विभिन्न विषयों में होती हैं। वार्त्ता को समझने की एक सीमा होती है। सामान्य शिक्षित वर्गों के लिए प्रसारित वार्त्ता के विषय गम्भीर एवं भाषा सिद्धान्तपरक होंगे तो छोटे बच्चों के लिए

प्रसारित भाषा में पशु पक्षियों की कहानियाँ, चुटकुले आदि रह सकते है। वाक्य-विन्यास भी छोटे-छोटे रहेगें। विद्यार्थियों के लिए प्रसारित वार्त्ताओं का आधार पाठ्यक्रम हो सकता है।

शिक्षित वर्गों के लिए प्रसारित वार्त्ताएँ प्रायः गम्भीर विषयों से सम्बन्धित रहती है तथा भाषा भी सिद्धान्तपरक एवं प्राञ्जल रहती है। यथा 'साम्यवाद' पर कोई वार्त्ता प्रसारित हो रही है, तो उसका स्वरूप गम्भीर प्रकार का होगा।

किन्तु सामान्य शिक्षित व्यक्तियों के लिए प्रसारित वार्त्ताओं में भी यह ध्यान रखना आवश्यक है कि उसमें यथासम्भव कठिन शब्दों (तत्सम) का प्रयोग नहीं रहना चाहिए, जो श्रोता समझ न सकें। दूरदर्शन अथवा रेडियो वार्त्ता की भाषा अधिकारी लोगों द्वारा ग्राह्य रहनी चाहिए, अतः लम्बे-लम्बे सुन्दर शब्दों का विशेष मूल्य नहीं। सफल वार्त्ताकार को कठिन साहित्यिक शब्दों का यथासम्भव प्रयोग नहीं करना चाहिए।

इस प्रकार के प्रयोग संक्षेपीकरण में सहायक तो होते हैं, किन्तु वक्ताओं की असफलता का कारण बन सकते हैं। शब्दों के प्रयोग चयन में एक महत्त्वपूर्ण बिन्दु यह भी है कि वार्ताकार यथासम्भव ऐसे शब्दों का प्रयोग न करें जो समान उच्चारण के कारण अर्थबोध में बाधक हो ।

रेडियो अथवा दूरदर्शन की भाषा-शैली के सन्दर्भ में तीसरी महत्त्वपूर्ण बात उल्लेखनीय है कि वार्त्ताकार को सदैव ध्यान रखना है कि उसका आधार भाषा का लिखित रूप नहीं; अपितु श्रव्य रूप है। इस दृष्टि से मुद्रित निबन्ध एवं प्रसारित वार्त्ता में अन्तर है। अतः कठिन शब्दों के साथ ही साथ लम्बे-लम्बे वाक्यों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। इससे प्रसारण-कर्त्ता को बोलने में कठिनाई तथा समझने में सुननेवालों को भी मानसिक व्यायाम करना पड़ता है। निबन्धों में भाषा का लिखित रूप मान्य है, किन्तु वार्ता-लेखन में त्याज्य । अतः वार्त्ताकार को इस बात का ध्यान अवश्य रखना चाहिए कि उसे भाषा के उच्चरित स्वरूप का आधार ग्रहण करना है। उसकी शैली, वाक्य, शब्द-सबका बोलचाल की भाषा के निकट रहना अपेक्षित है।

रेडियो अथवा दूरदर्शन की भाषा बोलचाल की भाषा के निकट रहनी चाहिए; किन्तु उसे बोलचाल की भाषा नहीं बनानी चाहिए। रेडियो-वार्त्ता साहित्यिक कृति है, उसमें प्रभावोत्पादकता, चुस्ती एवं सशक्तता रहनी चाहिए। बोलचाल की भाषा में बिखराहट होती है, स्थान-स्थान पर अधूरे वाक्य, शब्दों एवं बातों की निरर्थक आवृत्ति होती है।

५.३. वार्त्ता-लेखन के प्रदर्श (दूरदर्शन एवं आकाशवाणी) वैश्विकपण्यवादः

भूमण्डलीकरणस्य प्रेरकं तत्त्वं पण्यवादः विद्यते। पाश्चात्त्यदेशेषु निर्मितानां वस्तूनां विक्रयाय देशान्तरेषु विपणी प्रादुर्भूता। नवीनां हट्टानाम् अन्वेषणं प्रारब्धम्। तदर्थम् उन्मुक्तव्यापारस्य प्रस्तावः पाश्चात्त्यदेशैः उपस्थापितः विकसमानानां देशानां पुरतः । तदनन्तरं पाश्चात्त्यदेशानां पण्यवस्तूनि अन्येषां विकसमानानां देशानाम् आपणेषु विक्रयार्थं प्राचुर्येण प्राविशन्। अस्य परिणामः विकसमानानां देशानां कृते हानिकरः समपद्यत। विज्ञानशिक्षायै उपकरणानां महतीं

विक्रयसम्भावनाम् अनुभूय शिक्षायाः निजीकरणमपि पाश्चात्त्यैः प्रस्तावितम्। शिक्षायाः निजीकरणेन पाश्चात्त्यविचाराणां पाश्चात्त्यराजनीतेश्च प्रभावः विकसमानेषु देशेषु अवर्धत। संचारमाध्यमस्य विविधासु प्रणालीषु अपि पण्यवादस्य प्रभावः समदृश्यत। वस्तुतः भूमण्डलीकरणेन पाश्चात्त्यानाम् उत्पादानां विक्रयाय विकसमानदेशानां महती भोक्तृ-संख्या सुलभा जाता। व्यापारवर्धनेन बहुराष्ट्रिय-विक्रयसंस्थानानि युवकान् युवतीश्च नियोज्य प्रभूतम् अर्थलाभं प्राप्नुवन्ति।

पण्यवादः पत्रकारितामपि धनोपार्जनस्य लाभार्जनस्य च साधनमिव मन्यते। पुरा पत्रकारितायाः उद्देश्यं समाजस्य उन्नतिः, कल्याणसम्पादनञ्च आसीत्। संस्कृतेः प्रसारः प्रचारश्च तदुद्देश्यमासीत्। अधुना तु लाभार्जनमेव हि उद्देश्यम् । अतएव समाचार-पत्राणां पत्रिकाणां वा सम्पादकैः तथैव क्रियते यथा तेषां स्वामिभिः निर्दिश्यते। समाचारपत्राणां विज्ञापनेषु अपि अर्थलाभाधिक्यमेव उद्देश्यम् । अतएव विज्ञापनेषु नग्नतायाः अश्लीलतायाः प्राधान्यं बहुशः दृश्यते।

इत्थं पण्यवादस्य दुष्परिणामः आर्थिकसाम्राज्यवादरूपेण परिणमति। तदतिरिक्तं पण्यवादः स्थानीयां संस्कृतिं विनाश्य पाश्चात्त्यां संस्कृतिं प्रसारयति। अतएव भूमण्डलीकरणजनितः पण्यवादः सांस्कृतिक- साम्राज्यवादरूपेणापि परिवर्तते। यदि कस्यचिदपि देशस्य संस्कृतेः अस्मिता संरक्षणीया, तर्हि पण्यवादः यथाशक्ति सम्यक् आलोचनीयः। पण्यवादस्य उन्मुक्तः प्रसारः राष्ट्रहिताय नहि कथमपि संभवति। नेतारोऽपि चिन्तिताः विद्यन्ते। यतो हि पण्यवादमाध्यमेन वस्तुतः अमेरिकादेशस्य एव स्वार्थः सिद्ध्यति।

अमेरिकानिवासी प्रसिद्धः भाषाविद् नोआम्-चॉम्सकी-महोदयः विकसमानान् देशान् पाश्चात्त्यसंस्कृतेः अन्धानुकरणात् वारयति। अतः भारतीयैः नेतृभिरपि जागरूकैः भाव्यम् ।

रेडियो-वार्त्ता :

बालानां बालिशता

प्रथमं दृश्यम्– (वनस्य खण्डः, वन्य-जन्तूणां यदा कदा ध्वनयः श्रूयन्ते। त्रीणि मित्राणि वनखण्डे परस्परं मिथः आलपन्ति।)

रामः–श्याम ! अहम् अतीव भयम् अनुभवामि। वनम् इदम् अत्यन्तभयानकं दृश्यते।

श्यामः–भयं तु मामपि बाधते।

रामः–रजनी अधुना गतयामा। गृहे पितरौ अपि चिन्तितौ स्थास्यतः। अस्माकम् इयं दुरवस्था अनेन मोहनेन विहिता। यो हि उक्तवान् यत् वनमध्येन परावर्तनं सुकरं यतो हि अयं लघुमार्गः।

श्यामः–(परितः अवलोक्य) अहो मोहन! कुत्र विद्यते भवान्? अत्रैव आसीत्, अधुना उच्चैः स्वरेण आह्वयति–मोहन! मोहन!

रामः–(रोदनं नाटयन्)–प्रतीयते वयं गृहं गन्तुम् असमर्थाः भवेम।

श्यामः–तूष्णीं तिष्ठ। पुनः उच्च-स्वरेण आह्वयति–मोहन! मोहन! कुत्र असि, कुत्र असि?

मोहनः–(शनैः शनैः उत्तरति)–तिष्ठत । चरणौ कण्टकितौ, आगच्छामि शीघ्रमेव (अस्मिन्नवसरे कोऽपि पक्षी पक्षद्वयेन ध्वनन् डयति।

राम:–(उच्चस्वरेण क्रन्दति) श्याम! त्रायस्व, त्रायस्व।

मोहन:–(समीपम् आगत्य) त्वं कातर: कथम् ?

राम:–(त्रस्यन्) तत्र किम् आसीत्।

मोहन:–कोऽपि खग: आसीत्। अस्माकं संलापं श्रुत्वा स्वयं त्रस्यति स्म।

श्याम:–मोहन! त्वया उन्मार्गेण आनीतौ आवाम् । त्वम् अधुना शौर्यम् दर्शयसि, गच्छामो वयम्।

मृत्युदण्डस्य-औचित्यम्

अधुना सम्पूर्णे जगति मृत्युदण्डस्य औचित्यमाश्रित्य विवाद: जायते। कतिपये देशा: मृत्युदण्डं मानवाधिकारस्य प्रत्याख्यानमिव मन्यन्ते। मृत्युदण्डस्य मुखार: विरोधी एमनेस्टीन्इन्टरनेशनल-संस्था विद्यते। सा मन्यते सभ्यानां समाजे एतादृशस्य दण्डस्य आवश्यकता नैव। यदा कदा अर्थाभावे साक्ष्याभावे च मृत्युदण्ड: दीयते, पश्चात् ज्ञायते यत् मृत्युदण्डस्य निर्णय: अनुचित: आसीत्। पूर्वं 'शठे शाठ्यं समाचरेत्' अथवा 'tit for tat' इत्यस्य सिद्धान्तस्य अनुसरणं दण्ड-व्यवस्थाया: प्रमुखमङ्गमासीत् । अधुनापि देशे एतादृशी एव प्रथा विद्यते। समाचारपत्रेषु एतादृशी सूचना आसीत् यत् कञ्चित् अपराधिनं दण्डयितुं पीडिता छात्रा न्यायालयेन अधिकृता, यतो हि तस्या: छात्राया: नेत्रद्वयं तेन अपराधिना ज्वलनद्रवेण पूर्वं विनष्टं।

वस्तुत: अनयो: मत्यो: अतिरेक: स्पष्ट: एव। यावत्समाजे हिंसात्मकापराधानां बाहुल्यं दृश्यते अपहरणादीनां कुकर्मणां प्राधान्यं दृश्यते, तावत् मृत्युदण्डस्य अपनयनं परिहारो वा उचितं नैव प्रतिभाति। यदि मृत्युदण्ड: न्यस्यते तर्हि अपराधिन: स्वीयशङ्काभावे अधिकाधिकं नीच-कर्मसु संलग्ना स्थास्यन्ति। अतएव प्राणदण्डस्य सर्वथा त्याग: उद्वेगकर: भविष्यति।

दूरदर्शनवार्ता–

[बालश्रमिकसमस्या–बालश्रमिकाणां समस्याम् आश्रित्य दूरदर्शनेन कार्यक्रम: प्रसार्यते। सरला दूरदर्शनवार्ताया: तत्र समन्वयिका विद्यते, प्रतिभागिनश्च प्रियंवदा, सुनयना नरेन्द्रश्च।]

सरला–स्वागतम् भवतां अस्मिन् वार्ताकार्यक्रमे। अधुना बालश्रमिकसमस्याविषये सर्वे भूरिश: विचारयन्ति। अस्या: समस्याया: निराकरणं सर्वै: आवश्यकं मन्यते।

प्रियंवदा–सरले। सुष्ठु त्वया उक्तम्। बालश्रमिकाणां स्थिति: चिन्ताकरी। बाला एव अस्माकं देशस्य आगामिनि काले संरक्षका: पोषयितार: भविष्यन्ति। अत: बाल्यावस्थायां तेषाम् श्रमिकरूपेण नियोजनम् सर्वथा हानिकरं विद्यते। बाल्यावस्था तु अध्ययनाय कल्पते।

सुनयना–सत्यमेव उक्तम्! बाल्यावस्था अध्ययनाय स्वव्यक्तित्वस्य पोषणाय च भवति। यदि अस्याम् अवस्थायां सेवक-सेविकारूपेण बाला: कार्यं सम्पादयन्ति तर्हि कथमेतत् उचितम्।

नरेन्द्र:– शृणुत! बाला: श्रमिकरूपेण कार्यं कुर्वन्ति, एतस्य कारणं धनाभाव एव। एषाम् अभिभावका: भोजनव्यवस्थामपि कर्तुम् अक्षमा:, का कथा परिधानस्य शिक्षाया: वा प्रबन्धनस्य।

सरला–वस्तुतः बालश्रमिकाणां स्थितिः सन्तापदायिनी एव, अभिभावकानां कृते बालानां कृते च। विशेषतः समाजस्य उन्नयनं बालानां शिक्षणस्य अभावे नैव सम्भवति । यदि बालानां महती संख्या अशिक्षिता तिष्ठति तर्हि तेषां मेधायाः उपयोगः परिवर्तिनि काले राष्ट्रस्य उन्नत्यै कथं क्रियेत?

प्रियंवदा-सुष्ठु त्वया अभिहितम्। अधुना लघुबालकाः बालिकाश्च अध्ययनं विहाय गृहेषु, आपणेषु, उद्योगेषु अन्येषु स्थलेषु च श्रमं कुर्वन्ति। तेषां नियोजकानाम् अपि व्यवहारः नैव शोभनो भवति । ते बालकान् बालिकाः च ताडयन्ति, भोजनमपि सम्यग्रूपेण नैव ददति। अतः क्रूराः नियोजका बालकानां व्यक्तित्वं दूषयन्ति नाशयन्ति च।

नरेन्द्रः-सर्वकारेण तु 1986 तमे वर्षे संसदा अधिनियमः पारितः तदनुसारं कुत्रापि चतुर्दशवर्षेभ्यः अल्पवयसां नियोजनं विधिसम्मतं नहि विद्यते। यदि नियोजकाः भोजनालये, होटले, मोटले, पेयपदार्थापणे, गृहकार्येषु अथवा इष्टकानिर्माणस्थलेषु, भवननिर्माणेषु, अथवा अन्येषु आपणेषु अल्पवयसः नियोजयन्ति तर्हि ते दण्डभागिनः स्थास्यन्ति। विंशतिसहस्राणाम् अर्थदण्डः, वर्षभोग्यः कारावासश्च विहितः अधिनियमे। एतदतिरिक्तं सर्वोच्चन्यायालयेन उद्घोषितं यत् क्षतिपूर्त्तिरूपेण विंशतिसहस्र-रूप्यकाणां अर्थदण्डोऽपि देयः नियोजकैः।

सरला–तर्हि निष्कर्षरूपेण इदमेव निश्चीयते यत् अभिभावकानामपि कर्त्तव्यं यत् प्रतिपाल्यान् पाठशालासु विद्यालयेषु वा प्रेषयेयुः। ये अभिभावकाः स्वीयबालकान् नियोजनाय प्रेरयन्ति तेऽपि दण्डभाजः भवेयुः तदैव बालश्रमिकसमस्या शनैः शनैः समाप्तिमेष्यति।

प्रियंवदा, सुनयना, नरेन्द्रः (समवेतस्वरेण)–भवत्याः प्रस्तावः अनुमन्यतेऽस्माभिः।

सरला सर्वेभ्यो धन्यवादान् वितरति।

सूचनाधिकारः

सूचनाधिकारम् आश्रित्य आकाशवाण्यां कार्यक्रमः प्रसार्यते। 2005 तमस्य वर्षस्य अक्टूबरमासे सूचनायाः अधिकारः इति अधिनियमो भारतीयसंसदः सदस्यैः पारितः। अस्य अधिनियमस्य मुख्यम् उद्देश्यम् भ्रष्टाचारस्य निवारणमस्ति । अस्य नियमस्य इदमेव महत्त्वं यत् भारतीयनागरिकाः विभिन्नेभ्यः भारतीयकार्यालयेभ्यः निगमेभ्यः, शिक्षणसंस्थानेभ्यः कामपि सूचनां प्राप्तुं समर्थाः जायन्ते। यदि कस्मिन्नपि कार्यालये भ्रष्टाचरणेन नियुक्तिः दूषिता भवति अथवा उत्कोचः गृह्यते तर्हि एतत्सर्वं प्रकटीभविष्यति। यदि कोऽपि अधिकारी नागरिकेण जिज्ञासिता सूचनां नैव ददाति तर्हि स पदाधिकारी दण्डभाक् भविष्यति। इदन्तु सर्वैः स्वीक्रियते यत् स्वातन्त्र्यात् पश्चात् आर्थिककदाचरणं शनैः शनैः अवर्धत। नियमान् तिरस्कृत्य अधिकारिणः जाति-रक्तसम्बन्धं धनं वा स्वीकृत्य विविधकदाचरणे संलग्नः संजाताः। अतः सूचनाधिकारस्य आवश्यकता आसीत् इत्यत्र कोऽपि न सन्देहः। परन्तु एकः संशयः उत्पद्यते सूचनाधिकारस्य दुरुपयोगमन्तरेण। यदि रक्षामन्त्रालयात् वैदेशिकमन्त्रालयात् वा प्राप्तायाः सूचनायाः दुरुपयोगो भवति; तर्हि महाननर्थः जायेत। अतः सूचनाधिकारस्य दुरुपयोगः कथं वार्येत एतद् विचारणीयम् । वस्तुतः अस्मिन्विषये सर्वैः जिज्ञासुभिः सावधानैः भाव्यम्।

प्रश्नः समुदेति सूचनाधिकारस्य आवश्यकता कथम् आपतिता? प्रधानं कारणं तु पदाधिकारिभिः स्वीयकर्त्तव्यस्य अवहेलना। यदि सर्वेऽधिकारिणः, प्रशासकाः, शिक्षकाः

नियमानुसारेण स्वीयम् उत्तरदायित्वं वहन्ति तर्हि एतादृशस्य सूचनाधिकारस्य अधिनियमस्य आवश्यकता नहि उत्पद्यते।

इदं तु सर्वेषां विदितमेव यत् अस्मिन्देशे कदाचरणेन अर्जितस्य धनस्य प्राचुर्यं दिनानुदिनं संजातम्। एतस्य धनस्य उपयोगः उत्कोचदानाय, अन्येभ्यः कदाचारेभ्यश्च सर्वैः क्रियते। मन्त्रिणोऽपि तथैव आचरन्ति। अस्य परिणामः समाजाय भयावहः विद्यते। एकतः धनिवर्गः विद्यते यस्य कृते नहि किमपि अलभ्यं भवति, परन्तु बहुसंख्यकाः जनाः स्वजीवनं निर्वाहयितुं नैव समर्थाः। ते महत्कष्टम् अनुभवन्ति। छात्राणां, बालकानां कृते अपि अध्ययनस्य प्रबन्धः तोषकरः नैव जायते। ये अर्थाभावेन पीडिताः सन्ति, ते उच्चशिक्षाप्राप्तौ काठिन्यमनुभवन्ति।

विचार्यते यत् शनैःशनै सूचनाधिकारः आर्थिकं कदाचरणं न्यूनीकरिष्यति। अर्थहीनानां बालकानां कृते शिक्षणव्यवस्था, परिधानव्यवस्था, भोजनव्यवस्था च सम्यग्रूपेण भविष्यति। यदि सूचनाधिकारस्य एतादृशं फलं नैव भवति, तर्हि एतस्याधिनियमस्य महत्त्वमपि न्यूनं भविष्यति। यदि उत्कोचप्रथा ब्लैकमार्केटिङादि च अवरुध्येते, तर्हि उपलब्धस्य धनस्य उपयोगः जनकल्याणाय भविष्यति, नात्र कोऽपि सन्देहः ।

पञ्चायतराज्यम्

प्राचीनभारते पञ्चायतराज्यस्य महत्त्वम् अत्यधिकम् आसीत्। ग्रामीणाः पञ्चायतस्य आदेशं निर्णयञ्च अनुसरन्ति स्म। शनैः शनैः पञ्चायतपद्धतिः समाप्तिमगात् । स्वातन्त्र्यात् पश्चात् पञ्चायतराज्यस्य स्थापना सर्वकारस्य विभिन्नदलानां च उद्देश्यं जातम्। परन्तु षष्टिप्रायेषु वर्षेषु न किमपि कृतं सर्वकारैः। 1952 तमे वर्षे संविधानस्य संशोधनं जातम् । तदनुसारं पञ्चायतराज्यम् अनिवार्यं विहितम् ।

अधुना तु पी.के.थुंगनमहोदयस्य आध्यक्ष्ये संगठितायाः समितेः प्रस्तावानुसारं पञ्चायतराज्यं संवैधानिकं महत्त्वं प्राप्तवान्। अधुना ग्रामपञ्चायतसंस्थासु जिलापरिषत्सु अपि योजनायाः क्रियान्वयनस्य अधिकारः प्रशासनं च निहितं विद्यते।

भारते ग्रामाणानां संख्या नागराणां संख्याम् अतिशेते। अतएव ग्रामाणां विकासः तेषां समस्यानां निराकरणञ्च ग्रामीणां हस्तेषु निक्षिप्येत इति राजनीतिकाराणां विचारो विद्यते।

स्थानीयप्रशासनस्य महत्त्वं विश्वप्रसिद्धराजनीतिशास्त्रज्ञः हेरोल्डलास्की सम्मन्यते स्म। तस्य मतेन बहवः समस्याः स्थानीयाः भवन्ति। यदि तासां समस्यानां समाधानं स्थानीयजनैः विधीयते तर्हि एतद् श्रेयस्करम् समेषां कृते अभविष्यत्।

मूल्यप्रधानशिक्षायाः महत्त्वम्

मूल्यप्रधानशिक्षायाः आवश्यकता अधुना वर्धतेतमाम्। तथ्यमिदं यत् सूचनाप्रौद्यौगिक्याः क्षेत्रे अदृष्टपूर्वा उन्नतिः सञ्जाता। भूमण्डलीकरणेन देश-विभाजनस्य रेखाः विलुप्यन्ते इव; परन्तु कम्प्यूटर-इन्टरनेट-मोबाइल इत्यादिभिः यान्त्रिकैः संचारमाध्यमैः विश्वः नीडायमानः इव दृश्यते। उपभोक्तृप्रधानायाः संस्कृतेः प्रचारः दिनानुदिनं वर्धते। एतत्सर्वं तु मानवानां सुखाय कल्पितम् परन्तु एतस्य दुष्परिणामोऽपि, विशेषतः अस्माकं युववर्गकृते, आलोचनीयो विद्यते।

अर्थमेव पुरुषार्थत्रिवर्गे महत्त्वपूर्वं मत्वा युववर्गः उन्मार्गगामीव दृश्यते। नैतिकतायाः

अवमूल्यं, मर्यादारहितस्य आचरणस्य वृद्धिः सर्वत्रैव दृश्यते। उपभोगश्च युगवर्गस्य प्रधानमुद्देश्यं सञ्जातम्। अतएव अर्थोपार्जनमेव येनापि केनापि प्रकारेण पुरुषार्थः मन्यते। अनयोरपि दुष्परिणामाः सामाजिकतायाः अभावः। प्रतिसमाजं प्रतिपरिवारं वा पारस्परिकसौहार्दस्य क्षरणं, स्नेहस्य आदरस्य च ह्रासश्च दृश्यते। सर्वे आत्मकेन्द्रिताः सञ्जाताः। विद्यालयेषु महाविद्यालयेषु वा दीयमाना शिक्षा जीवनमूल्यानां विषये नहि किमपि निर्दिशति। पूर्वं ऋग्वेदे उक्तं 'मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन् मा स्वसारमुत स्वसा।' अधुना तु तद्विपरीतमेव दृश्यते। भर्तृहरेः उक्तिरेव अधुना सर्वैः अनुस्रियते।

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः
स पण्डितः स श्रुतिमान् गुणज्ञः।
स एव वक्ता स च दर्शनीयः
सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति।

फलतः आधुनिकं जीवनं रसहीनम् इव जातम्। आवश्यकता विद्यते यत् शिक्षामाध्यमेन नैतिकतायाः, मैत्रीभावस्य, पारस्परिकसंवेदनायाः प्रसारः क्रियेत। तदैव अस्माकं समाजः, अस्माकं देशश्च वास्तविकीं समुन्नतिं अवाप्स्यति।

५.५. समाचार पत्रों के लिए वार्त्ता लेखन-विशेषताएँ

समाचार आज की एक बहुत बड़ी आवश्यकता है। समाचार के अभाव में समाचारपत्र की कोई आवश्यकता नहीं रहती है। जीवन में समाचार और समाचारपत्र दोनों का बड़ा महत्त्व है। वस्तुतः समाचार वह है जिसमें लोगों का ध्यान आकर्षित करने की क्षमता है।

किसी भी खबर या घटना को समाचार बनाने में कुछ महत्त्वपूर्ण कारक होते हैं।

(1) समाचार की प्रमुख विशेषता उसका ताजापन हैं।

(2) समय के साथ-साथ उसमें विश्वसनीयता का योग उसे आकर्षक एवं महत्त्वपूर्ण बनाता है।

(3) समाचार के महत्त्व का निर्धारण प्रसंग, समाचार-पत्र और संपादक पर निर्भर करता है।

समाचार के प्रकार– समाचार के प्रकार निर्धारण में विषय का महत्त्व उतना नहीं है जितना कि उसकी प्रकृति का है। कुछ समाचार बँधे-बँधाए निश्चित तरीके से प्राप्त होते रहते हैं और कुछ अचानक एवं असंभावित रूप से प्राप्त होते हैं। इस दृष्टि से समाचार दो प्रकार के हो सकते हैं–

1. संभावित या प्रत्याशित समाचार
2. असंभावित या अप्रत्याशित समाचार

समाचारों का संकलन भी अनेक विधियों से किया जाता है। अनेक प्रकार के समाचार बैठे-बिठाये समाचार-पत्र के कार्यालय में आ जाते हैं। इसके विपरीत कभी-कभी समाचारों की प्राप्ति के लिए काफी प्रयास करना पड़ता है। सभा-सोसाइटियों, नगर-पालिकाओं, नगर-निगमों, विधान-सभाओं, संसद भवनों या किसी उत्सव विशेष के समाचार स्वतः ही प्राप्त होते रहते हैं। ये प्रत्याशित समाचार कहलाते हैं। जिन समाचारों को अप्रत्याशित या

असंभावित समाचारों की संज्ञा प्राप्त है, वे अपनी प्रकृति से अनिश्चित और आकस्मिक होते हैं। ऐसे समाचारों में दुर्घटना, हत्या, आग, डकैती, मृत्यु आदि को लिया जा सकता है। इस प्रकार की सूचनाओं की प्राप्ति के लिए समाचार-संग्राहक को पुलिस स्टेशन, रेलवे-स्टेशन, बस स्टैन्ड, अग्निशामक दल, अस्पताल, न्यायालय से सम्पर्क रखना चाहिए। खेलकूद, नाटक, चलचित्र और सांस्कृतिक कार्यक्रमों से सम्बन्धित समाचार प्रत्याशित होते हैं, उनकी अपेक्षा अप्रत्याशित समाचारों की प्रसार-गति अधिक होती है। अखबार में दोनों ही प्रकार के समाचार छपते हैं।

समाचार-संकलन–

समाचार-संकलन का कार्य कठिन है। उनके संकलन में संग्राहक को बड़ी सतर्कता और सजगता से काम करना चाहिए। समाचार सत्य हों, सामयिक हों, भावनाओं को छूने वाले हों और परिणामदर्शी हो तभी उनका महत्त्व है। समाचारों का संकलन, ग्रहण, सम्पादन, लेखन और प्रस्तुतीकरण एक निश्चित विधि से होना चाहिए।

संवाददाता के गुण :

समाचार पत्र में संवाददाता की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण है। संवाददाता के लिए अपने कार्य में तीव्र उत्सुकता और रुचि होना आवश्यक है। उसका कार्य चुनौतीपूर्ण एवं कठोर होता है। पत्रकार वही सफल हो सकता है जिसके मन में हमेशा कुछ नया और ताजा जानने की उत्कण्ठा होती है। एक अच्छे संवाददाता में निम्नांकित गुणों का होना अनिवार्य है।

(1) पैनी दृष्टि; जिससे वह घटनाओं का सही अवलोकन कर सके।

(2) त्वरित श्रवण शक्ति-कही गयी बात को सुनकर तुरन्त ग्रहण कर सके।

(3) खतरों में भी आनन्द की अनुभूति प्राप्त करे।

(4) उसे लेखनी का धनी और आकर्षक शुद्ध भाषा लिखने पर पूरा अधिकार रहना चाहिए।

(5) प्रभावपूर्ण शैली के निर्माण की क्षमता वाला हो।

(6) उसमें सहनशीलता एवं धैर्य की कमी न हो।

(7) गोपनीयता और परिश्रम का सदा ध्यान रखे।

(8) वाक्-चातुरी और दूरदर्शिता का गुण हो।

(9) गम्भीर अध्ययन और उसके अनुसार कार्य करने की क्षमता का धनी हो।

(10) विदेशी भाषाओं में कम से कम एक भाषा की जानकारी उसे होनी चाहिए।

५.४.१. वार्त्ता-लेखन के प्रदर्श

दुर्घटना-संवादः– दुर्घटना-संवाद पाठकों के लिए रोमाञ्चकारी होते हैं। इसमें दुर्घटनाओं की सूचना संवाददाताओं द्वारा समाचार पत्रों में प्रकाशनार्थ भेजी जाती हैं। इसका कारण प्रध ानतया राज्य की सुरक्षा व्यवस्था सम्बन्धी निर्देशों के अनुपालन में जनता द्वारा बरती जाने वाली शिथिलता है। दुर्घटनाएँ विविध प्रकार की हो सकती हैं–(1) यातायात सम्बन्ध ी यथा–विमान-रेल-सड़क सम्बन्धी दुर्घटनाएँ ।

(2) प्राकृतिक आपदाओं में अग्निकाण्ड, भूकम्प, बाढ़ सुनामी सदृश दुर्घटनाएँ ली जा सकती हैं।

संवाददाता को दुर्घटना का विवरण भेजते समय संवाद की विश्वसनीयता एवं रोचकता का ध्यान रखना आवश्यक है। हताहतों की संख्या, स्थान, समय, कारणादि के उल्लेख के साथ पीड़ितों की चिकित्सा सम्बन्धी सूचना भी रहनी चाहिए। उनकी चिकित्सा जिन स्थानों पर हो रही है, उसका भी उल्लेख करना अपेक्षित है; ताकि सम्बन्धियों को अधिकारियों से सम्पर्क करने में सुविधा हो । नमूने के लिए कतिपय संवाद लेखन के उदाहरण दिए जा रहे हैं।

(1) **विमान-दुर्घटना**–दिनाङ्कः 1 जनवरी देहलीविमानपत्तने अद्य प्रातः एयरफ्रांसविमानसेवायाः एकः विमानोऽवतरणसमये अकस्मात् अग्निना परिवृत्तः। यद्यपि विमानस्य कर्मचारिभिः कथमपि महता प्रयासेन बहवः यात्रिणः संरक्षिताः परन्तु पञ्चषाः यात्रिणः अतीव दग्धा। तेषां जीवनम् सन्दिग्धं विद्यते। विंशतियात्रिणः अग्निदाहेन पीडिताः सन्ति। अधुना तेषां चिकित्सा राजकीय-चिकित्सालये भवति। अन्येषां यात्रिणाम् अपि व्यवस्था विहिता विमानपत्तनस्य क्षेत्रीय-निर्देशकेन। अस्याः दुर्घटनायाः कारणस्य अन्वेषणाय सर्वकारेण एका समितिः संगठिता। विमानसेवायाः दुर्घटनानिवारण-निदेशकः समितेअध्यक्षः नियुक्तः। अनुमीयते यत् दुर्घटना यान्त्रिक दोषजनिता विद्यते। पीडितानां सम्बन्धिनां अभिभावकानां वा सूचनायै विमानपत्तने एकं सूचनाकेन्द्रं स्थापितं विद्यते यस्य दूरभाषसंख्या 22443080 विद्यते।

(2) आपराधिक घटनाओं के संवाददाताओं को निष्पक्षता, सजगता एवं सावधानी से कार्य करना चाहिए। अप्रमाणित अपराधों की सूचना देना उचित नहीं। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि अपराधी यदि नहीं पकड़ा गया हो तो उसका उल्लेख नहीं किया जाए तथा गलतबयानी न की जाय। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि कभी-कभी अन्वेषण सम्बन्धी सूचना के कारण जाँच में बाधा होने लगती है तथा अपराधी सतर्क हो जाता है।

यथा– देहली दिनाङ्कः 12 नवम्बरः। अद्य दिल्लीविश्वविद्यालयपरिसरे केनापि छात्रेण कस्याश्चिद् छात्रायाः उपरि ज्वलनद्रवः निक्षिप्तः। तेन तस्याः नेत्रद्वयम् विनष्टमिव शङ्क्यते। अपराधस्य मूलकारणं किं विद्यते अस्य निश्चयः अधुना अपि न जातः। मूलकारणस्य अन्वेषणपरैः आरक्षिवर्गैः अधुना वास्तविकता न जायते । संभावना इयमेव यत् छात्र:प्रेमनिवेदने विफलीभूय एतद्दुष्कृत्यं सम्पादितवान्। अधुना पीडिता छात्रा विसंज्ञा तिष्ठति। अतः आरक्षि-अनुसन्धान-विभागोऽपि स्वीयम् अन्वेषणम् अधुना बाधितं मन्यते। अनुमीयते दिनद्वयाभ्यन्तरे पीड़िता छात्रा सर्वं वर्णयितुं समर्था भविष्यति। आरक्षि-विभागस्य अधीक्षकः ज्ञापयति यत् अपराधिनः ग्रहणं निश्चितमेव प्रतिभाति।

युद्धविषयक वार्ता-

संवाददाता को युद्धकाल में संवाद-प्रेषण के क्रम में कतिपय बिन्दुओं को ध्यान में रखना अपेक्षित है।

1. किसी भी स्थिति में संवाददाता को गोपनीयता की रक्षा करनी चाहिए। कभी-कभी युद्ध के क्रिया-कलापों को अतिरञ्जना के साथ वर्णित किया जाता है, ताकि जनता का

मनोबल टूटे नहीं; किन्तु सूचनाएँ इतनी गलत भी नहीं होनी चाहिए कि युद्ध की प्रगति से जनता अन्धकार में रहे। सेना के अग्रिम मोर्चों की प्रगति की सूचना संवाददाता को सेना के अधिकारियों के सुझावों को ध्यान में रखकर समाचारपत्र में भेजना चाहिए। यथा–

ढाका 10 दिसम्बर 1971 श्रूयते यत् अद्य भारतीयाः सैनिकाः ढाकानगरम् प्रवेक्ष्यन्ति। सैन्य- संचालनस्य निर्देशकस्य कार्यालयसूत्रात् ज्ञायते यत् शत्रवः स्वनियोगान् त्यक्त्वा समर्पणाय समुत्सुकाः तिष्ठन्ति। स्थानीया जनता भारतीयसैनिकानां सोत्साहं स्वागतं करिष्यतीति संभावना विद्यते। भारतीयाः सैन्यविमानाः आकाशे शत्रूणां सैन्यविमानान् अपनेतुं समर्थाः । फलतः शत्रुसैन्यविमानाः ढाकानगरस्य आकाशे न दृश्यन्ते। आशा विद्यते यत् दिनद्वयाभ्यन्तरे ढाकानगरम् भारतीयसैनिकाः अधिकरिष्यन्ति।

संसदीयसंवादः

संसद् और विधान सभाओं के उपवेशनों एवं उनकी दैनिक कार्रवाई की सूचना देने में संवाददाताओं को प्रामाणिकता पर पूर्ण ध्यान देना चाहिए। साथ ही संवाददाता को संसदीय प्रणाली का भी ज्ञान होना चाहिए। संवाद भेजने में संसदीय नियमों के विधि-निषेधों का भी ध्यान रखना चाहिए। संसदीय संवादों के प्रेषण में किंवदन्ती का सहारा नहीं लेना चाहिए। जल्दीबाजी में भेजे गए संवाद संवाददाता को परेशानी में डाल सकते हैं; क्योंकि संसद् को विशेष अभियोग लगाने का अधिकार प्राप्त है। संसद् का समाचार भेजते समय संवाददाता को विरोधी पक्ष के विचारों को भी प्रमुखता देनी चाहिए। केवल सरकारी पक्ष का समर्थन या गुणानुवाद नहीं होना चाहिए। यथा–

देहली, दिनाङ्कः 31 जनवरी, अद्य भारतीयसंसदि शिक्षाविधेयकमाश्रित्य विवादः संजातः। सर्वकारस्य प्रस्तावः उच्चशिक्षायाः निजीकरणपक्षे विद्यते। सर्वकारः वैदेशिकविश्वविद्यालयानां शाखानां भारते स्थापनाय संसदः अनुमतिं कांक्षति। विपक्षदलानि प्रस्तावमिमं भारतीयानां कृते हानिकरं मन्यन्ते। तेषां मतेन निजीकरणेन वैदेशिकप्रभावः भारतीयसंस्कृतेः न्यूनीकरणाय सम्पत्स्यते। वैदैशिकराजनीतिकविचाराणां प्रसारोऽपि भारते वर्धिष्यते। अतः अस्य प्रस्तावस्य वामदलैः विरोधः अतिमुखरः विद्यते। विभिन्नानां दलानां कार्यस्थगनप्रस्तावैः संसदः कार्यं प्रतिदिनं बाध्यते। शङ्क्यते यत् अस्य विधेयस्य पारणं दुष्करमेव तिष्ठति।

५.६. सारांश

वार्त्ता-लेखन आज की सूचना-प्रौद्योगिकी के विभिन्न संचार-माध्यमों के सन्दर्भ में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस इकाई में आकाशवाणी, दूरदर्शन एवं समाचारपत्र इन तीन संचार माध्यमों का विवेचन किया गया है। उल्लेखनीय है कि जहाँ आकाशवाणी की वार्त्ता श्रव्य होती है वहीं दूरदर्शन की वार्त्ता दृश्य-श्रव्य हैं, और समाचार पत्र की वार्त्ता केवल पाठ्य होती है।

वार्त्ता लेखन की विशेषताओं में उसकी शैली महत्त्वपूर्ण है। वार्त्तालेखन का आरम्भ, मध्य एवं अन्त आकर्षक एवं रोचक होना चाहिए। कल्पना की अनावश्यक उड़ान न होकर उसे तथ्यात्मक होना चाहिये। यथासम्भव टेक्नीकल शब्दों या बड़े-बड़े आँकड़ों का प्रयोग नहीं करना चाहिए अन्यथा वार्त्ता की बोधगम्यता बाधित होती है। वार्त्ताकार को दर्शक, पाठक तथा श्रोताओं की मानसिक क्षमता का ध्यान रखकर वार्त्ता लिखनी चाहिये। वार्त्ता में अनावश्यक विस्तार नहीं होना चाहिए तथा कानूनी दृष्टि से ऐसी कोई बात नहीं होनी चाहिए